ओं नमः शिवाय

स्त्रीअधिकारमीमांसा ॥

श्रोत्रिय शङ्करलाल ने आर्षग्रन्थों

से सङ्ग्रह करके

सत्यव्रत शर्मा द्विवेदी के प्रबन्ध से

सरस्वतीप्रेस-इटावा में

प्रकाशित कराया ॥

ता० १३ । ३ । १९०१

प्रथमवार १०००

मूल्य =)

ओं नमः शिवाय ॥

भारत के पश्चात् धर्म का यहां तक लोप हुआ कि पुरुषों को स्त्रियों के पढ़ानें में भी शंका उत्पन्न होने लगी और प्रायः स्वार्थी पण्डित भी कहने लगे कि इन को पढ़ने का अधिकार नहीं है इन की और शूद्र की एक संज्ञा है और इस में ये लोग यहां तक कामयाब हुवे कि ब्राह्मण वर्ण तक की स्त्रियों को मूर्ख बना दिया जिन से अन्य वर्ण की स्त्रियां शिक्षा पाती थीं। फिर यहां तक धर्म्म का लोप हो गया कि अपने देवताओं को छोड़ कर मुर्दे यवनों को पूजने लगीं और जब यवनों ने देखा कि यह ऐसी धर्मभ्रष्ट हो गयीं तब उन्हों ने हर जिले में एक एक पीर कायम करा जिन को अब तक हमारे हिन्दू भाई स्त्रियों के वशी भूत होने के कारण जा जा कर पूजते हैं और ऐसा मूर्ख ही नहीं करते या नीच जाती के ही मनुष्य नहीं पूजते हैं किन्तु जो सुशिक्षित कहलाते हैं और ब्राह्मण वर्ण तक जो सब से उच्च वर्ण में गिना जाता है पूजते हैं ॥

इस लिये यह आवश्यक हुवा कि स्त्रियों के पठन पाठन और यज्ञादि करने का विचार किया जावे कि इन को क्या क्या पढ़ने और क्या क्या करने का अधिकार है।

(१ पहिला अध्याय शंका समाधान)

प्र०—मनु जी ने तो शूद्र की तरह इन के भी संस्कार अमं-

त्रक कहे हैं और इन को निरिन्द्रिय बताया है ॥

तथा च मनुः अध्याय ९ श्लोक १८०

नास्तिस्त्रीणांक्रियामन्त्रै-रितिधर्मेव्यवस्थितिः। निरिन्द्रिया ह्यमन्त्राश्च स्त्रियोऽनृतमितिस्थितिः ॥ १८ ॥

अर्थ,:-जातकर्मादि क्रिया स्त्रियों की मंत्रों करके नहीं हैं। इस प्रकार शास्त्र की मर्यादा है इस्वास्ते विना इन्द्रिय के और अमंत्र स्त्रियां हैं और इन की स्थिति अनृत है अर्थात् झूठी है ॥

फिर इन को वेदादि शास्त्र का अधिकार कैसे हो सकता है

उ०-इस वाक्य से तो पठन पाठन के विषय का कुछ भी सम्बन्ध नहीं है यहां मनु जी स्त्रियों की निन्दा करते हैं जो इस से पहिले श्लोकों से मालूम हो सकती है इस कारण कि पति इन की रक्षा अच्छे प्रकार से करे जिस से इन के दुष्टस्वभाव दवे रहें,

नहीं तो मनु जी स्त्री को निरिन्द्रिय लिखते जो प्रत्यक्ष से भी विरुद्ध है और इस श्लोक का यह आशय है-

"नास्ति स्त्रीणां क्रिया" स्त्रीयों को कोई क्रिया नहीं यद्यपि शब्दार्थ यही है परन्तु इस का अभिप्राय यह नहीं है क्यों कि प्रत्यक्ष में भी स्त्री पुरुष की अपेक्षा से दुगना चौगना काम करती है इस लिये इस का यह आशय है

कि स्त्री को इतना बल नहीं है कि जो पुरुष की नाईं तपकर सके और इसी कारण इसका नाम अबला कोश में कहा है ।

"नास्तिस्त्रीणां मंत्रैः" स्त्रियों को मंत्र भी नहीं हैं

अर्थात्-इन को विचारशक्ति भी कम होती है जिस के कारण पुरुष की नाईं यह स्वाध्याय आदि कर्म्म कांड नहीं कर सकती हैं ।

"निरिन्द्रियाह्यमन्त्राश्च" इसका यह अभिप्राय नहीं है कि स्त्रियों के इन्द्रिय नहीं क्यों कि कोई स्त्री विना इन्द्रिय के दिखाई नहीं देती और न इसका यह आशय है कि वह मंत्र नहीं पढ़सकती हैं किन्तु इसका यह आशय है कि उन की इन्द्रिय पुरुष के समान नहीं किन्तु व्रतादि करने में बलहीन हैं ।

"स्त्रियोऽनृतमितिस्थितिः" स्त्रियों का होना ही झूठ- यह क्या विलक्षण अर्थ है अर्थात् स्त्रियां हैं ही नहीं यह कदापि हो नहीं सकता है इस लिये इसका यह अभिप्राय है कि जब वह पुरुष के समान, तप स्वाध्याय, व्रत, सत्यासत्य का विचार यथार्थ नहीं कर सकती हैं तब इन का जन्म निष्फल है ॥

और यदि पहिले अर्थ का अभिप्राय ठीक मान लिया जावे तो जो स्त्रियां पहिले वेदादि सत् शास्त्रवेत्ता होती थीं उन के पठन पाठन को अधर्म्म मानना पड़ेगा और यह कदापि हो नहीं सकता क्योंकि स्मृति और सूत्रों में स्त्री

को वेदादि पठन और यज्ञादि करने का अधिकार कहा है, इसलिये इसका यह पिछला ही आशय ठीक है आगे चलकर उन स्त्रियों के भी हम दृष्टान्त लिखेंगे जो विद्वान् हुई हैं और जिन्हों ने शास्त्रार्थ भी करे हैं ॥

दूसरी शंका मनुः

नास्तिस्त्रीणांपृथग्यज्ञो नव्रतंनाप्युपोषितम्।
पतिंशुश्रूषतेयेन तेनस्वर्गेमहीयते ॥१५५॥

अर्थ, स्त्रियों का अलग कोई यज्ञ नहीं है न व्रत न उपवास केवल एक पति की शुश्रूषा करना ही धर्म्म है जिस करके स्त्री स्वर्ग में पूज्य होती है ॥ १५५ ॥

इस मनुजी के श्लोक से तो स्पष्ट है कि स्त्री को पृथक् यज्ञ करने का अधिकार नहीं है और न व्रतादि कर सकती है तब स्त्री को यज्ञादि अधिकार कैसे मान लिया जावे ॥

आप का यह अर्थ तो यथार्थ है परन्तु ज़रा समझ का फेर है जैसे ब्रह्मचारी का मुख्य धर्म गुरुसेवा करना है वैसे ही स्त्री का भी मुख्यधर्म पतिशुश्रूषाही करना है क्योंकि स्त्री का गुरु पति ही है ॥

तथा च–

पतिरेकोगुरुःस्त्रीणाम् वर्णानांब्राह्मणोगुरुः।
गुरुरग्निर्द्विजातीनाम् सर्वस्याभ्यागतोगुरुः॥

अर्थ—स्त्री का एक पति ही गुरु है ब्राह्मणों का गुरु अग्नि, क्षत्रिय वैश्यादि वर्णों का गुरु ब्राह्मण और अतिथि सब का गुरु है ॥

इसलिये क्या ब्रह्मचारी अन्यधर्म के कार्य नहीं कर सकता है हां ऐसे कार्य जिन से गुरुसेवा में बाधा हो कदापि नहीं करने चाहिये ऐसे ही जब पति स्त्री का गुरु है उसे उस की सेवा में सदा तत्पर रहना चाहिये ऐसा कोई कार्य नहीं करना जिस से पति की सेवा में बाधा पड़े और व्रतादि के करनेसे अवश्य पतिसेवा में बाधा होती है इस कारण मनु ही क्या सब ऋषि स्त्री को उपवास आदि व्रतों के करने को मना करते हैं ॥

तथा च पराशर० अ० ४०—

पत्यौजीवतियानारी—उपोष्यव्रतमाचरेत् ।
आयुष्यंहरतेभर्त्तुः सानारीनरकंव्रजेत् ॥१७॥

अर्थ—जो स्त्री पति के जीते हुये निर्जल व्रत करती है वह अपने भर्त्ता की आयु घटाती है और मरने के पश्चात् नरक को जायगी ॥ १७ ॥

और रहा यज्ञ करने का अधिकार सो जैसे स्त्री पृथक् नहीं कर सकती है वैसे ही पुरुष भी अलग नहीं कर सकता है यह जैमिनी के सूत्रों से स्पष्ट है । और पति की मृत्यु के पश्चात् तो स्त्री भी उपवास आदि व्रत कर सकती है ॥

हर कार्य उस के स्वामी के ही नाम से कहा जाता है जैसे किसी राजा की सवारी निकलती है और उस के साथ सहस्रों भृत्य होते हैं परन्तु जब कोई पूछता है कि यह कौन जाता है तब यही उत्तर मिलता है कि अमुक राजा जाता है उस के नौकरों का कोई नाम नहीं लेता ऐसे ही पुरुष भी स्त्री का स्वामी होने से हर कार्य्य में वही अग्रणी समझा जाता है और ऐसा समझना कोई अनुचित भी नहीं और स्वामी वही कहलाता है जो हर कार्य्य के करने में स्वतंत्र हो और दास वह है जो स्वामी के आधीन हो, ऐसे ही स्त्री हर कार्य्य के करने में पुरुष की नाईं स्वतंत्र नहीं है, परन्तु यह कहना कि उसे यज्ञादि का अधिकार ही नहीं उचित नहीं जिस को आगे प्रमाण सहित लिखेंगे॥

दूसरा अध्याय॥

इस बात को सब विद्वान् और प्रायः वे मनुष्य जिन को दक्षिण यात्रा अथवा बंगालियों का साथ हुवा है अच्छी तरह जानते होंगे कि उन की स्त्रीयां कितनी सुशिक्षित और विदुषी हैं और आजकल जैसे कुछ विद्वान् पंडित दक्षिणी और बंगालियों में हैं वैसे दूसरी जाती में नहोंगे यदि कोई सहस्रों में एक दो हुवा तो वह नहीं हुवे की बराबर है क्यों कि कार्य्य अधिक ही को मानकर हुआ करता है॥ तब क्या वह जो अपनी कन्याओं को पढ़ाते हैं अधर्म्म ही करते हैं ?॥

अब हम कुछ प्रमाण भी आर्ष ग्रन्थों के लिखते हैं जिनसे स्त्रियों के पढ़ाने का अधिकार स्पष्ट विदित होता है॥

कुमारींशिक्षयेद्विद्यां धर्म्मनीतौनिवेशयेत्। द्व-
योः कल्याणदाप्रोक्ता याविद्यामधिगच्छति१
ततोवरायविदुषे कन्यादेयामनीषिभिः। एष
सनातनःपन्था ऋषिभिःपरिगीयते॥२॥ नीतौ

अर्थः–कुमारी कन्या को प्रथम विद्या पढ़ावे और धर्म्म नीती में प्रवेश करावे क्यों कि जो कुमारी विद्या को प्राप्त होती है वह पिता और पति दोनों के कुल को सुख देने वाली होती है इस धर्म्म शिक्षा और विद्या प्राप्ति के पश्चात् विद्वान् वर को कन्या देनी चाहिये ऋषि लोगों ने इसी को सनातन धर्म मार्ग कहा है ॥ २ ॥

महानि० अ० ८–

कन्याप्येवंपालनीया शिक्षणीयाप्रयत्नतः।
देयावरायविदुषे धनरत्नसमन्विता ॥१॥

अर्थ–पुत्रों के तुल्य कन्या का भी पालन करना चाहिये और अतिप्रयत्न के साथ विद्या शिक्षायुक्त करके धन रत्नादि सहित विद्वान् वर को देनी चाहिये ॥ १ ॥

वात्सायन का० सूत्र अ० ३ सू० १२–

अभ्यासप्रयोज्यांश्च चातुःषष्टिकान्
यान् कन्या रहस्येकाकिन्यभ्यसेत् ॥

अर्थ—अभ्यास करके ६४ कलाओं को कन्या एकान्त में अवश्य पढ़े ॥

अन्यच्च वात्स्यायनो भगवान् मुनिः—

तस्माद्विश्वासिकाज्जनाद्रहसि शास्त्रैकदेशं शास्त्रं वा स्त्रीगृह्णीयात् ॥१॥ प्रत्ता च पत्युरभिप्रायात् ॥

अर्थ—पूर्वोक्त कारण से विश्वासपात्र जन से एकान्त में शास्त्र का एकदेश वा पूर्णशास्त्र स्त्री पढ़े (ग्रहण करे) और विधिपूर्वक दान कर दी हुई कन्या जिस को दी गई है उस पति के अभिप्राय से अर्थात् आज्ञा से विद्या पढ़े ॥

और मूर्खा कन्या होने के कारण यथावत् पातिव्रतधर्म नहीं जान सकेगी और जो कन्या पतिसेवा आदि करना नहीं जानती हो उसका विवाह पिता न करे ॥

तथा च मनु० अ० श्लोक

अज्ञातपतिमर्यादा—मज्ञातपतिसेवनाम् ।
नोद्वाहयेत्पिताकन्या—मज्ञातधर्मसेवनाम् ॥

अर्थ—पति के साथ वर्त्ताव की मर्यादा को जो नहीं जानती पति की सेवा करना भी जिस ने नहीं जाना है ऐसी कन्या का विवाह पिता न करे अर्थात् जब पति के साथ वर्त्ताव और पतिसेवा को यथार्थ जानने लगे तब विवाह करे ॥ मनुः अध्याय ९—

काममामरणात्तिष्ठे-द्गृहेकन्यर्त्तुमत्यपि ।
नचैवैनांप्रयच्छेत्तु गुणहीनायकर्हिचित् ॥
त्रीणिवर्षाण्युदीक्षेत कुमार्यृतुमतीसती ।
ऊर्ध्वंतुकालादेतस्मा-द्विन्देतसदृशंपतिम् ॥

अर्थ-कन्या ऋतुमती होती हुई भी मरने तक घर में क्वारी ही रहे यह श्रेष्ठ है परंतु गुणहीन के साथ कभी विवाह न करे पितादि कोई विवाह न करे तो ऋतुकाल को प्राप्त हुई भी कन्या तीन वर्ष पितादि का बाट देखे फिर तीन वर्ष व्यतीत होने पश्चात् अपने बराबर गुणवाले पति के साथ स्वयं विवाह कर लेवे ॥

इस श्लोक से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि जब कन्या स्वयं परीक्षा करके वर को स्वीकार करेगी तो उस की इतनी योग्यता अर्थात् बुद्धि तो अवश्य होनी चाहिये कि वह उस्की परीक्षा कर सके और यह कार्य्य मूर्खा का नहीं है इस लिये स्त्री को अवश्य पढ़ाना चाहिये ॥

और विचारो कि एक २ ऋतु में ब्रह्महत्या का पाप लिखा है तब जन्म पर्यन्त क्वारी रहने में कितना पाप होगा परन्तु असदृश वर से विवाह करना इस से भी अधिक दोष माना है ॥ क्योंकि यदि स्त्री पुरुष एक दूसरे के प्रतिकूल हुवे तो परस्पर सुख या धर्म्म इत्यादि कुछ नहीं बन सकेगा और जब पुरुष को स्वर्गादि का होना स्त्री के ही आ-

धीन है तब तो वह अवश्य पढ़ी हुई होनी चाहिये क्यों कि मूर्खा होने से यथोचित धर्म्म न कर सकने के कारण कल्याण भी किसी का नहीं हो सकेगा।

तथाच मनुः अध्या० ९० श्लोक २८०

अपत्यंधर्म्मकार्याणि शुश्रूषारतिरुत्तमा।
दाराधीनस्तथास्वर्गः पितृणामात्मनश्चह ॥२८॥

अर्थ, पुत्रोत्पादन और धर्म्मकार्य्य अर्थात् अग्निहोत्रादि और शुश्रूषा उत्तम रति तथा पितरों का और अपना स्वर्ग इन सब कामों की सिद्धि भार्य्या के आधीन है ॥ २८ ॥

और गृह्य सूत्र में लिखा है कि—

" सखे ? सप्तपदा भव " इस में जो सखा शब्द है वह भी सामान्य वाचक है क्योंकि सखा शब्द में ख्या धातु है जिस का अर्थ है कि समान है ख्याति जिस की और इस अर्थ में (कि) प्रत्यय होता है। इस से जो विद्यादि गुण में समान है उसी को सखा कहते हैं मूर्ख और विद्वान् आपस में कदापि सखा नहीं हो सकते हैं॥

पत्नीमध्यापयेत् कस्मात्पत्नीजुहुयादिति वचनात् नहि खल्वनधीत्य शक्नोति पत्नी होतुमिति ॥

अर्थ—स्त्री को अध्ययन कराना चाहिये क्योंकि बिना पढ़ने के पत्नी (स्त्री) अग्निहोत्र नहीं कर सकती और सूत्रों

में स्त्री को अग्निहोत्र करने का तथा पढ़ने का अधिकार है ॥ इसी महाभाष्य के कर्ता पतञ्जलि जी के कथन से भी स्त्रियों को पठन पाठन का अधिकार है जैसा कि पतञ्जलि जी ने (अनुपसर्जनात् अ० ४ प० ३ सू० २१ के) भाष्य में लिखा है कि—

उपेत्याधीयते तस्या उपाध्यायी उपाध्याया

भावार्थः—जिस स्त्री के समीप जाकर पठन पाठन करें उस स्त्री का नाम उपाध्यायी और उपाध्याया होता है॥ इसी तरह अ० ४ पा० १ सू० १४ के भाष्य में लिखा है ॥

आपिशलमधीते ब्राह्मणी आपिशला ब्राह्मणी। काशकृत्स्निना प्रोक्ता मीमांसा काशकृत्स्नी काशकृत्स्नीमधीते काशकृत्स्ना ब्राह्मणी ॥

भाषार्थ—आपिशल नाम ग्रन्थ को पढ़ने वाली ब्राह्मणी का नाम आपिशाला, और काशकृत्स्नी नाम मीमांसाशास्त्र को पढ़ने वाली ब्राह्मणी का नाम काशकृत्स्ना कहा है॥

तीसरा अध्याय ॥

उपनयनवेदादि पठन के विषय में।

कुमारीणामपि ब्रह्मचर्यम् अतएव देवीभागवते पंचमस्कन्धे सप्तदशोऽध्याये—मन्दोदर्युपा-

ख्याने—दशवर्षां त्वामुपलक्ष्य तव पिता क-
म्बुग्रीवेण सह तव विवाहं कर्त्तुमिच्छतीति
मातुरभिधाने मन्दोदर्युवाच—नाहंपतिंकरि-
ष्यामि नेच्छामेऽस्तिपरिग्रहे। कौमारंव्रतमा-
स्थाय कालंनेष्यामिसर्वथा॥ स्वातन्त्र्येणाचरि-
ष्यामि तपस्तीव्रंसदैवहि। पारतन्त्र्यंपरंदुःखं
मातः!संसारसागरे॥ एवंप्रोक्तातदामाता पतिं
प्राहनृपात्मजा। नचवाञ्छतिभर्त्तारं कौमार
व्रतधारिणी॥ व्रतजप्यपरानित्यं संसाराद्वि-
मुखीसदा। नकाङ्क्षतिपतिंकर्त्तुं बहुदोषवि-
चक्षणा॥ भार्याया भाषितं श्रुत्वा तथैवसंस्थि-
तोनृपः। विवाहोनकृतःपुत्र्या ज्ञात्वाभाव-
विवर्जिताम्॥ वर्त्तमानागृहेष्वेवं पित्रामात्रा
चरक्षिता। इति स्पष्टमिदमेतेन यत्पुंसामि
व स्त्रीणामपि नैष्ठिकब्रह्मचर्यवत्त्वं शास्त्रा
नुमतमिति। एवमेव श्रीमद्भागवते चतुर्थ-
स्कन्धे प्रथमेऽध्याये—तेभ्योदधारकन्येद्वे वयु-

नां धारिणींस्वधा। उभेतेब्रह्मवादिन्यौ ज्ञान विज्ञानपारगे॥ इति। अत्र "सनकादिवदूर्ध्व-रेतस्केइतिभावः,, इति वीरराघवः स्वटीका यां "तयोस्तु संततिर्नाभूज्जीवन्मुक्तत्वा ,, दिति तु श्रीधरः प्राहस्म। यतश्च स्त्रियोऽपि ब्रह्मवादिन्यो नैष्ठिकब्रह्मचर्यवत्यश्चेत्यति पुष्कलम्॥

रामभिश्र कृत उद्वाह समय मीमांसा में से लिखा है॥

भा०—कुमारी कन्याओं का भी ब्रह्मचर्याश्रम होता है—इसीलिये देवीभागवत के पांचवें स्कन्ध सत्रहवें अध्यायस्थ मन्दोदरी कन्या के उपाख्यान में लिखा है कि हे मन्दोदरी तुम को दश वर्ष की हुई जान कर तुम्हारे पिता रावण के साथ तुम्हारा विवाह करना चाहते हैं ऐसा माता के कहने पर मन्दोदरी बोली कि—"मैं पति नहीं करूंगी विवाह करने की मेरी इच्छा नहीं है किन्तु अभी बाल्यावस्था से ही कुआरी रहने का नियम धारण कर के सब आयु को बिताढूंगी। वृद्धावस्था मरण पर्यन्त ब्रह्मचारिणी रहूंगी। और स्वतन्त्रता के साथ सदा ही घोर तप करूंगी। हे माता! इस संसार सागर में पराधीन होना ही बड़ा दुःख है। मन्दोदरी कन्या के ऐसा कहने पर उस की माता ने

अपने पति से कहा कि मन्दोदरी कुमारी ब्रह्मचारिणी रहना चाहती है पति करना नहीं चाहती । नित्य ही व्रत और जप में तत्पर रहती हुई संसारी कामों से पृथक् रहेगी बहुत दोष और दुःख जानती हुई विवाह करना नहीं चाहती । मन्दोदरी के पिता अपनी पत्नी का भाषण सुनकर राजा वैसे ही विवाह के उद्योग से शान्त रहे और कन्या की रुचि इधर न देखकर उस का विवाह नहीं किया । इस प्रकार घर में विद्यमान मन्दोदरी की रक्षा की " यह कथन स्पष्ट है इस के अनुसार सिद्ध है कि पुरुषों के तुल्य स्त्रियों का भी नैष्ठिक [जन्म से मरण पर्यन्त] ब्रह्मचारिणी होना शास्त्रानुकूल है । इसी प्रकार श्रीमद्भागवत के चतुर्थ स्कन्ध प्रथमाध्याय में कहा है कि "विज्ञान धारण करने वाली स्वधा ने उन के लिये दो कन्याओं को धारण किया वे दोनों कन्या ब्रह्मवादिनी, ब्रह्म–परमात्मा को सम्यक् कहने वाली और ज्ञानविज्ञान में पारंगत थीं" इस पर वीरराघव टीकाकार ने लिखा है कि "वे दोनों कन्या सनकादि ऋषियों के तुल्य ऊर्ध्वरेता थीं । " और श्रीधर टीकाकार ने कहा है कि "उन दोनों कन्याओं के सन्तति–कोई सन्तान उन के जीवन्मुक्त होने से नहीं हुआ " तिससे सिद्ध हुआ कि स्त्रियां भी ब्रह्मवादिनी और नैष्ठिक ब्रह्मचारिणी होती हैं यह अत्यन्त पुष्ट प्रमाण है । यह लेख उद्वाहमीमांसा पुस्तक में से लिखा है ॥

बहुत से लोग शंका करते हैं कि यदि स्त्री का विवाह संस्कार न होगा तो उसे उत्तमलोक प्राप्त नहीं होगा ॥

उत्तर—शल्यपर्वणि वृद्धस्त्रियां नारदेन प्रयुक्तः कौमारंब्रह्मचर्य्यंवा कन्यैवास्मिन्नसंशयः ॥ ऋतुस्नातातुयाशुद्धा साकन्येत्यभिधीयतेइति

ननु, "असंस्कृतायाः,,—इति वचने विवाह-रहिताया उत्तमलोकाभावउक्तः, सोऽनुपपन्नः। विवाहरहितानामपि ब्रह्मवादिनीनामुपनयनाध्ययनादिभिरुत्तमलोकप्राप्तिसम्भवात् ॥ अतएव हारीतेनोक्तम्—द्विविधाः स्त्रियो ब्रह्मवादिन्यः सद्योवध्वश्च, तत्र ब्रह्मवादिनीनामुपनयनमग्नीन्धनं वेदाध्ययनं स्वगृहे भिक्षाचर्य्या—इति।

सद्योवधूनां तूपस्थिते विवाहे कथञ्चिदुपनयनमात्रं कृत्वा विवाहः कार्य्यः (पराशरमाधवेउद्धृतवाक्यम्) ॥

अर्थ,—महाभारत शल्य पर्वस्थ वृद्ध स्त्री प्रसङ्ग में नारदने कहा है कि—"कुमार ब्रह्मचारिणी वृद्धावस्था पर्यन्त क-

न्या ही बनी रहती है इस में सन्देह नहीं। ऋतुस्नान के पश्चात् शुद्ध हुई कन्या ही कहाती है॥" प्र०— जिस स्त्री का संस्कार नहीं होता उस की उत्तम गति नहीं होती ऐसे प्रमाण मिलने से विवाह रहित स्त्री को स्वर्ग प्राप्त न होगा। उ०—सो ठीक नहीं क्योंकि जिन का विवाह नहीं हुआ ऐसी ब्रह्मवादिनी—ब्रह्मज्ञान युक्त स्त्रियों को उपनयन और वेदाध्ययनादि उत्तम संस्कारों द्वारा स्वर्ग प्राप्त होना सम्भव है। इसी लिये हारीत स्मृति में कहा है कि "दो प्रकार की स्त्रियां हैं एक ब्रह्मवादिनी द्वितीय सद्योवधू उन में से ब्रह्मवादिनियों का उपनयन संस्कार होकर समिदाधान और ब्रह्मचर्याश्रम के नियमों सहित वेदाध्ययन करना तथा अपने घर में भिक्षा मांग कर खाना शास्त्रोक्त है। पर जो सद्योवधू—शीघ्र ही वहू (किसी की पत्नी) बनना चाहती हैं उन का विवाह के समय थोड़ा उपनयन मात्र करके विवाह कर देना चाहिये।

वैवाहिकोविधिःस्त्रीणा—मौपनायनिकः परः, इत्युक्तेर्विवाहएवोपनयनस्थानीयः। अतस्तद्दिनएव 'पतिरेव गुरुःस्त्रीणाम्। पतिसेवा गुरौवासो गृहार्थोऽग्निपरिक्रिया, इति मनुवचनात्। अहतेन वसनेन पतिः परि

दध्यात्—या अकृन्तन्नित्येतयर्चा परिधत्तध-
त्तवाससेति च। प्रावृतां यज्ञोपवीतिनोमभ्यु-
दानयन् जपेत्—सोमोददद्गन्धर्वायेति। इति
गोभिलगृह्यतः। यज्ञोपवीतधारणं, वसि-
ष्ठस्मृतावेकविंशेऽध्याये—तत्तत्प्रायश्चित्तार्थं-
स्त्रीणामपि गायत्रीजपहोमविधानस्यान्यथा-
नुपपत्त्या गायत्र्यङ्गीकारं पतिरेव कारयेत्,
"पुराकल्पे कुमारीणां मौञ्जीबन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा,,
स्वगृहे चैव कन्याया भैक्षचर्य्या विधीयते।
वर्ज्जयेदजिनं चीरं जटाधारणमेवच,,॥ इति
वचनेनापि णिजर्थभूतप्रयोजकत्वस्यास्मिन्
कल्पे प्रतिषेधेऽपि धात्वर्थव्यापाराश्रयत्वरू-
पप्रयोज्यत्वस्याप्रतिषेधात्॥ ततश्च यथा व-
काशं पतिरेव स्वशाखावेदं पाठयेत्। अतए-
व—जातेरस्त्रीविषयाद०—इति सूत्रभाष्ये जा-
तिलक्षणकथनावसरे। कथितस्य अपत्यप्र-

त्ययान्तः शाखाध्येतृवाची च जातिवाचकः, इत्यर्थकस्य गोत्रं च चरणैः सह, इति वार्तिकस्य कठी, बह्वृची, अध्वर्युः, इत्युदाहरणानि वेदाध्ययनमन्तराऽनुपपन्नानि संगच्छन्ते । अतएव तत्तद्यागेष्वपि यजमान पत्न्यास्तत्तन्मन्त्रपाठः । याज्ञे कर्मण्यपशब्द भाषणस्य प्रतिषिद्धत्वेन संस्कृतवाक्यैरेव यज्ञ गतैर्वक्तव्यतया तत्तदुक्तेतिकर्तव्यताज्ञानस्य व्याकरणाध्ययनमन्तराऽनुपपन्नत्वेन व्याकरणमप्यध्यापयेत् । नामधेयस्य ये केचिदभिवादं न जानते । तान्प्राज्ञोऽहमिति ब्रूयात्स्त्रियः सर्वास्तथैवच । इति मनूक्तौ संस्कृताज्ञात्वेनैव सिद्धौ स्त्रियः सर्वा इति विध्यन्तरस्यानुपपत्त्या संस्कृतज्ञा अप्याचार्यपत्नीरपि तथैव ब्रूयादिति मेधातिथिव्याख्यानमेव वरम् ॥ (निर्णय सिन्धुके उद्धृतवाक्य,)

अर्थ—"विवाह सम्बन्धी विधान स्त्रियों का उपनयन है" इस कथन से विवाह ही उपनयन स्थानी है । इस कारण

उसी दिन से लेकर "पति ही स्त्रियों का गुरु है। तथा मनुजीने कहा है कि पति की सेवा करना स्त्रियों का गुरुकुलवास है और घर का प्रबन्ध करना स्त्रियों का समिदाधान-अग्निसेवन है। (या अकृन्तन्०) इस मन्त्र से पति स्त्री को अहत वस्त्र नयी धोती वा साड़ी पहनावे। और द्वितीय मन्त्र से उत्तरीय वस्त्र उढ़ावे। कपड़ा और यज्ञोपवीत धारण की हुई पत्नी को लाता हुआ पति (सोमो ददद्०) मन्त्र का जप करे ऐसा गोभिलगृह्य सूत्रकारने कहा है। इस से स्त्रियों को यज्ञोपवीत धारण करना शास्त्रोक्त है। तथा वसिष्ठ स्मृति के इक्कीसवें अध्याय में लिखा है कि उस २ प्रायश्चित्त के लिये स्त्रियों को भी गायत्री का जप तथा होम करना चाहिये। सो यह काम गायत्री का उपदेश हुए विना हो नहीं सकता इस लिये पति ही अपनी स्त्री को गायत्री का उपदेश करे। तथा—"पूर्व कल्प वा युग में कन्याओं को भी मोञ्जी मेखला ब्रह्मचर्य में बांधने वेदों के पढ़ने और गायत्री के उपदेश का विधान था। अपने घर में ही कन्या ब्रह्मचारिणी को भिक्षा मांगने का विधान है। मृग चर्म चीर जटाधारण ब्रह्मचारिणी कन्या न करे।" इस वचन से भी इस कल्प में वेद पढ़ाने का निषेध सिद्ध होने पर भी वेद पढ़ने का निषेध नहीं आ सकता है। इस कारण यथावकाश पति ही अपनी शाखा सम्बन्धी वेद अपनी पत्नी को पढ़ावे।

इसी कारण (जातेरस्त्रीविषयाद्यो०) इस पाणिनि सूत्र के भाष्य में जाति का लक्षण कहने के अवसर पर कहे "अपत्य प्रत्ययान्त और शाखा का अध्येतृवाची जाति वाचक है" इस अर्थ वाले "गोत्र चरणों सहित" इस वार्त्तिक के कठी, बह्वृची, और अध्वर्यु इत्यादि उदाहरण स्त्रियों के वेद पढ़े बिना ठीक नहीं बन सकते। इसी लिये उन २ यज्ञों में भी यजमान की पत्नी का मन्त्र पढ़ना बन सकता है। यज्ञ कर्म में असंस्कृत अपशब्द बोलना निषिद्ध होने से और यज्ञ में सम्मिलित हुए को संस्कृत में ही बोलना उचित होने से और उस २ प्रसङ्ग में कहे कर्त्तव्य का बोध व्याकरण पढ़े बिना हो नहीं सकता इस कारण से स्त्रियों को व्याकरण भी पढ़ना चाहिये। "जो कोई पुरुष नाम धेय के अभिवादन को नहीं जानते उन के समक्ष सब स्त्रियों के तुल्य विद्वान् पुरुष अहम् ऐसा कहे" इस मनुजी के कथन में संस्कृत की अज्ञता होने से ही सब स्त्रियों का निषेध आजाता फिर स्त्रियों का पृथक् नाम व्यर्थ हो कर यह जताता है कि संस्कृत जानने वाली आचार्य की पत्नी को भी असंस्कृतज्ञ पुरुष के समान अभिवादन करे इस प्रकार किया मेधातिथि का व्याख्यान ही अच्छा है॥

अथर्ववेद अ० ३ प्र० २४ काण्ड ११ का १८ वां मंत्र है

"ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्,"

इस से भी प्रतीत होता है कि कन्या ब्रह्मचर्य्य धारण करके अपने माता पितादि से विद्या पढ़ती थीं तत् पश्चात् उन का विवाह होताथा क्योंकि विवाह में जो कन्या पठनीय वेद मंत्र हैं उन को विना पढ़े हुये कैसे कह सकती है जैसे लाजा हवन का मंत्र—

ओं—अर्य्यमणांनुदेवं कन्याऽग्निमयक्षत। स नो अर्य्यमा देवः प्रेतो मुञ्चतु मापतेः स्वाहा ॥ इत्यादि

गोभि० गृ० सू० प्र० १ कं० ३ सू० १५

कामं गृह्योऽग्नौ पत्नी जुहुयात् । सायंप्रातर्होमौ गृहपत्नी गृह्यएषोऽग्निर्भवतीति ॥

भावार्थ—सायं प्रातःकाल पत्नी (स्त्री) अग्निहोत्र करे इसको गृह्याग्नि कहते हैं क्योंकि पत्नी से ही घर है ।

आपस्तम्ब० औ० सू० प्र० १२ कं० ५ सू० १२

पत्नी पान्नेजनीर्गृह्णातिप्रत्यक्तिष्ठन्तीवसुभ्यो रुद्रेभ्यआदित्येभ्यइति ॥

भावार्थ, पत्नी (स्त्री) यज्ञ के अर्थ जल पात्र लिये हुवे पश्चिम की ओर खड़ी होकर (वसुभ्यो रुद्रेभ्यो०) इत्यादि मंत्रोच्चारण करे ।

मनु० सायंत्वन्नस्य सिद्धस्य पत्न्यमन्त्रं बलिंहरेत्। वैश्वदेवंहिनामैतत्सायं प्रातर्विधीयते ॥ १२१ ॥ नवैकन्यानयुवति–र्नाल्पविद्योनबालिशः। होतास्यादग्निहोत्रस्य नार्त्तोनासंस्कृतस्तथा ॥ ३६ ॥

अर्थ, सायंकाल में रसोई होने पर स्त्री विना मंत्र का बलि हरण करे वैश्वदेव यह नाम गृहस्थों को सायं प्रातः विधान किया है ॥ १२१ ॥

कन्या युवति थोड़ी पढ़ी हुई बालक वीमार और संस्कार करके रहित ऐसी स्त्री अग्निहोत्र का सायं प्रातः होम न करे ॥ ३६ ॥

गोभिलगृह्यसूत्र से स्त्री को दोनों समय का अग्निहोत्र प्राप्त हुआ परन्तु मनुजी ने नियम कर दिया कि सायंकाल होम विना मंत्र करे, इस से यदि कोई यह आशय निकाले कि स्त्री को विना मंत्र के ही अधिकार है तो यह उनकी हट है क्योंकि ऊपर कितने प्रमाण स्त्री को गायत्री जप और वेद मंत्र पढ़ने के दिये हैं॥ दूसरे श्लोक से स्पष्ट विदित है कि उक्त स्त्रियों को छोड़कर अन्य स्त्रिया होम करें और इस से यह भी पाया जाता है कि जो स्त्री होम करे वह विद्वान् होनी चाहिये जिस से अग्निहोत्रादि यथाविधि करसके॥ और यहतो सामान्य बार्ता है कि स्त्रियां तो ऋषियों की नाई वेद मंत्रों की ऋषिनी हुई हैं॥

पूर्वीरहमिति षडृचं पञ्चदशं सूक्तं त्रैष्टुभं उपान्त्या बृहती, अत्र त्रयाणां द्विऋचानां लोपामुद्रागस्त्यतच्छिष्यैर्दृष्टत्वात्तएव ऋषयः। सूक्तप्रतिपाद्योऽर्थो रतिर्देवता। अत्रानुक्रमणिका—पूर्वीषट् जायापत्योर्लोपामुद्रायाश्चागस्त्यस्य च द्विऋचाभ्यां रत्यर्थं संवादं श्रुत्वाऽन्तेवासी ब्रह्मचार्यन्त्येबृहत्यादिश्च पश्यदिति विशेषविनियोगो लैङ्गिकः॥

पूर्वीरहंशरदः शश्रमाणादोषावस्तोरुषसोजरयन्तीः। मिनातिश्रियंजरिमा तनूनामप्यूनुपत्नीर्वृषणोजगम्युः॥ वर्ग २२ मं० १

पदानि—पूर्वीः। अहम्। शरदः। शश्रमाणा। दोषाः। वस्तोः। उषसः। जरयन्तीः। मिनाति। श्रियम्। जरिमा। तनूनाम्। अपि। ऊँइति। नु। पत्नीः। वृषणः। जगम्युः॥१॥

भाष्य—लोपामुद्राऽऽह हे अगस्त्य अहं लोपामुद्रा पूर्वीः शरदः पुरातनानसंख्यातान् संवत्सरान् दोषा रात्रीः वस्तोरहानि—तथा देहं जरयन्तीरुषसः उषःकालांश्च सर्वत्रात्यन्तसंयोगे द्वितीया। अद्यतनकालपर्यन्तं बहुसंवत्सरं कातर्य्येन त्वच्छुश्रूषया शश्रमाणा श्रान्ताऽभूवं इदानीं तु जरिमा जरा तनूनामङ्गानां श्रियं सौन्दर्यं मिनाति हिनस्ति। एवमपि नानुगृह्णासीत्यर्थः। अप्यू नु अपिः संभावनायां उइत्यवधारणे नु इति वितर्के। इदानीमपि किं संभावनीयं लोके हि पत्नीः स्त्रियः वृषणः सेक्तारः पुरुषाः जगम्युः गच्छेयुः संभोगंकुर्युः। अतो मां किमित्यवमन्यसे इदानीमपि वासं भावयेत्यर्थः ॥१॥

॥२॥ कन्यावारिति सप्तर्चमेकादशं सूक्तं अत्रेः पुत्री अपालाख्या त्वग्दोषपरिहारायानेन सूक्तेनेन्द्रं स्तुतवती अतः सैव ऋषिः।

प्रथमाद्द्वितीये पङ्क्तौ शिष्टाः पञ्चानुष्टुभः इन्द्रो देवता । तथा चानुक्रान्तं—कन्यावाः सप्तात्रेय्यपालेतिहासऐन्द्र आनुष्टुभं द्विपङ्क्त्यादीति । विनियोगो लैङ्गिकः ॥

पुराकिलात्रिसुता अपाला ब्रह्मवादिनी केनचित्कारणेन त्वग्दोषदुष्टा सती अत एव दुर्भगेति भर्त्रा परित्यक्ता पितुराश्रमे त्वग्दोषपरिहाराय चिरकालमिन्द्रमधिकृत्य तपस्तेपे ॥

कन्या३ वा रवायती सोममपि स्रुताविदत् । अस्तं भरन्त्यब्रवीदिन्द्राय सुनवै त्वा शक्राय सुनवै त्वा ॥

भाष्यम्—वाः—उदकं प्रति—अवायती स्नानार्थमभ्यवगच्छन्ती कन्या स्रुता स्रुतौ मार्गे सोममप्यविदत् । तं सोमं अस्तं गृहं प्रति

भरन्ती आहरन्ती सा सोममब्रवीत्। हे सोम त्वा त्वामिन्द्राय सुनवै मम दन्तैरेवाभिषुणवै। पुनर्हे सोम त्वा त्वां शक्राय समर्थाय सुनवै–इदानीमेवाभिषवं करवै। सोमभक्षणकाले दन्ते दन्तध्वनिं ग्रावध्वनिमिति मत्वेन्द्रः तामगमत्॥

अर्थ, (पूर्वीरहं०) इत्यादि छः ऋचावाले पन्द्रहवें सूक्त का त्रिष्टुप्छन्द, पांचवां मन्त्र बृहती छन्द है। यहां दो २ ऋचाओं के तीन भागों के लोपामुद्रा, अगस्त्य और उन के शिष्य क्रम से ऋषि हैं। अर्थात् पहिली दो ऋचाओं का लोपामुद्रा ऋषि तीसरी चौथी के अगस्त्य और पांचवी छठी के उन के शिष्य हैं। तथा सूक्त में कहा रति अर्थ देवता है यही बात अनुक्रमणिका में लिखी है। (पूर्वीरह०) इस मन्त्र का अर्थ वेद भाष्यकार सायणाचार्य जी ने लिखा है उस की भाषा–अगस्त्य को स्त्री लोपामुद्रा कहती है कि हे अगस्त्य जी मैं लोपामुद्रा (पूर्वीःशरदः) पूर्व से असंख्य वर्षों तक बराबर तथा (दोषावस्तोः) दिनरातों और (उषसः) बहुत असंख्य उषःकालों तक अपने शरीर को (जरयन्तीः) जीर्ण करती हुई आज पर्यन्त बहुत वर्षों से सम्पूर्णता से आप की शुश्रूषा करती हुई (श्रमाणा) थक

गई हूं। और अब (जरिमा) वृद्धावस्था मेरे (तनूनाम्) शरीरावयवों को (श्रियम्) सुन्दरता को (मिनाति) नष्ट करती जाती है तो भी आप मुझपर कृपा दृष्टि नहीं करते (अप्यू नु) इस समय भी क्या सम्भव है ? आप कृपा करें (पर्तोवृषणो जगम्युः) लोक में यह चाल है कि वीर्य सेचन करने वाले पुरुष स्त्रियों के निकट जाते हैं सम्भोग करते हैं इस से आप मेरा अपमान क्यों करते हैं अब भी मेरे साथ संवास कीजिये ॥

(कन्या वारिति०) इत्यादि सात ऋचा वाले का ग्यारहवें सूक्त से अत्रि ऋषि की अपाला नामक पुत्री ने त्वचा के दोष का निवारण करने के लिये इन्द्र की स्तुति की है इस कारण इस सूक्त की वही अपाला ऋषि है। इस सूक्त की पहिली दूसरी ऋचा पङ्क्ति शेष अनष्टुप् छन्द हैं तथा सूक्त का इन्द्र देवता है और ऐसा ही अनुक्रमणिका में भी लिखा है। पूर्वकाल में अत्रि ऋषि की अपाला नामक पुत्री ब्रह्मवादिनी वेद तत्वज्ञ हुई किसी विशेष कारण से त्वचा के दोष [श्वेत कुष्ठादि रोग] से दूषित हुई इसी कारण दुर्भगा कहकर पति ने उस का परित्याग करदिया तब पिता के ही घर पर त्वग्दोष को हटाने के लिये बहुत कालतक इन्द्र की उपासना के साथ तप करती रही ॥

भा०-(कन्यावा०) जलाशय की ओर स्नानार्थ जाती हुई कन्या को मार्ग में सोम मिला। उस सोम को घर के

प्रति लाती हुई उस कन्या ने सोम से कहा कि हे ! सोम तुम को इन्द्र के लिये अभिषव करूंगी और अपने दांतों से ही अभिषव करूंगी। फिर हे! सोम तुमको समर्थ इन्द्र के लिये अभी अभिषव करूंगी। सोम भक्षण के समय दांतों के शब्द को पत्थरों का शब्द जान कर इन्द्र उस कन्या के पास आये ॥ इस मन्त्र का शाट्यायन ब्राह्मण में यही अर्थ स्पष्ट किया है ॥

गोभिल पारस्कर गृह्यसूत्रों और स्मृति आदि के प्रमाणों से यह तो स्पष्ट सिद्ध हो गया कि स्त्री ब्रह्मचर्य के साथ उपनयन कराकर वेदादि पढ़ती रहीं और अग्निहोत्र भी करती थीं परन्तु आज कल जब पुरुष सन्ध्या तक भी करना नहीं जानते और एक दिन भी ब्रह्मचर्य से नहीं रह सकते हैं तब स्त्रियों की तो वार्ता ही क्या है परन्तु जो पण्डित कहते हैं कि स्त्रियों को अग्निहोत्रादि का अधिकार नहीं या विष्णुसहस्रनाम के पाठ करने मात्र से पति सहित नरक को जायंगी तो उन से पूछना चाहिये कि तब ऐसे २ वाक्य क्यों प्रामाणिक ग्रन्थों में लिखे हैं ॥

४ (चौथा अध्याय स्त्रियों के यज्ञ करने के विषय में)

कात्यायन श्रौत सूत्र–

"अथ ब्राह्मणो यजेत स्वर्गकामो यजेते-

त्येवमादिष्विदं सन्दिह्यते किं ब्राह्मणं स्वर्गकामञ्च पुरुषमेवाधिकृत्य यजेतेत्येष शब्द उच्चरितः। उतानियमः स्त्रियं पुमांसं वेति। किन्तावत्प्राप्तम्?। पुल्लिङ्गनिर्देशात् पुरुषस्यैवाधिकारः कुतः। अत्र लिङ्गस्य प्रकृत्यर्थतया विवक्षितत्वात्। यथा गृहं स मार्ष्टीत्यत्र अतः पुरुषस्यैवाधिकारो न स्त्रियाः। अद्रव्यत्वाच्च यतः स्त्रीनिर्धना अतः सा द्रव्यत्यागात्मकं कर्म कर्तुं कथं शक्नोति द्रव्याभावात् द्रव्याभावश्च ॥

भार्यापुत्रश्चदासश्च त्रयएवाधनाःस्मृताः।
यत्तेसमधिगच्छन्ति यस्यतेतस्यतद्धनम् ॥
तस्मात्पुरुषस्यैवाधिकारः प्राप्तः।

अर्थ—वेद की ये दो श्रुति हैं कि "ब्राह्मणो यजेत" "स्वर्गकामो यजेत" यदि यहां यह शंका हो कि ब्राह्मण ही जिसको स्वर्गकी इच्छा हो यज्ञ करे तो यह ठीक नहीं है क्योंकि मुख्यसूत्र में "ब्राह्मणराजन्यवैश्यानां" ऐसा पाठ है इस से यहां "स्वर्गकामो यजेत" यह "ब्राह्मणोयजेत"

इस का विशेषण नहीं है किन्तु पृथक् २ श्रुति हैं अर्थात् ब्राह्मण के अतिरिक्त जिस किसी ब्राह्मण क्षत्री वैश्य को स्वर्ग की इच्छा हो वह यज्ञ करे ॥

दूसरे यहां पुल्लिङ्ग वाचक शब्द है तो पुरुष ही यज्ञ कर सकता है क्योंकि यहां पुल्लिङ्ग हो निर्देश करा है जैसे "गृहं स मार्ष्टि" न्यायमें भी पुरुष ही लिया जाता है स्त्री नहीं ली जाती ॥

तीसरे यज्ञ विना धन के नहीं हो सकता है स्त्री नौकर पुत्र यह जिस के होते हैं उस का ही धन होता है जो कुछ उन के पास भी हो, । इति पूर्व पक्षः ॥

स्त्री चाविशेषात् ॥७॥

स्त्री च अग्निहोत्रादिकर्मस्वधिकारिणी भवति । कुतः अविशेषात् यतः स्वर्गकामो ब्राह्मणइत्येतत्पुल्लिङ्गं श्रूयमाणमपि निर्विशेषकरम् । यतइदमुद्दिश्यमानस्य विशेषणम् । यः स्वर्गकामः स यजेतेत्येवम् तेन विधि संस्पर्शाभावादविवक्षितम् । अतो न पुरुषस्यैवाधिकारः किन्तु स्त्रियाअपि अथवा अविशेषात् इति स्वर्गकामत्वाविशेषादित्यर्थः । तदुक्तम् जैमिमिना ६।१।१६ ॥

फलोत्साहविशेषादिति। ननूक्तम् निर्धनत्वादनधिकारइति। मैवम् धनवती हि सा तस्या अपि कर्त्तनादिना द्रव्यार्जनसम्भवात् पितृमातृभर्त्रादिदत्तसम्भवाच्च पत्यार्जितस्योभयसाधारणत्वाच्च। धर्मे चार्थे च कामे च नातिचरितव्या पाणिग्रहणाद्धि सहत्वं कर्म्मसु, तथा कर्मफलेषु द्रव्यपरिग्रहेषु चेत्यादि स्मरणात्। ननूक्तं यत्ते समधिगच्छन्तीत्यादिकम्, तत्रोच्यते स्मृतिप्रामाण्यान्निर्धनया भवितव्यम्। श्रुतिविशेषात्फलार्थिनया यष्टव्यम्। यदि स्मृतिमनुरुध्यमाना परवशा निर्धना च स्यात् यजेतेत्युक्ता सती न यजेत तत्र स्मृत्या श्रुतिर्बाध्यते। नचैतद्युक्तम् तस्मात्फलार्थिनी सती स्मृतिमप्रमाणीकृत्य द्रव्यम्परिगृह्णीयात्, यजेत चेति अतः स्मर्यमाणमपि निर्धनत्वमन्याय्यमेव श्रुतिविरोधात्। अतो निर्धनवत्त्व-

प्रतिपादकं वचनमस्वातन्त्र्यपरं व्याख्येयम् । तस्मात् स्त्रिया अपि फलार्थित्वाविशेषाद्धनवत्त्वाच्चाधिकारो भवति,—इति तु-सिद्धान्तपक्षः ।

अर्थ—स्त्री भी अग्निहोत्रादि कर्म की अधिकारणी है क्यों कि "स्वर्ग कामो यजेत" इस में जो कामना शब्द है उस से पुरुष ही का अभिप्राय नहीं है किन्तु स्त्री पुरुष दोनों में जिसको स्वर्गकी इच्छा हो वह यज्ञ करे और यदि तुम यह कहो कि यह पुलिङ्ग है इसलिये स्त्री को अधिकार नहीं तो यह भी नहीं बन सकता क्योंकि कोई शब्द तीनों लिङ्ग से पृथक् नहीं है यदि यहां स्त्रीलिङ्ग होता तब पुरुष को अधिकार नहीं पाया जाता और नपुंसकलिङ्ग हो नहीं सकता था इसलिये यहां लिङ्ग उच्चारणके कारण कुछ पुरुष से ही तात्पर्य नहीं है इस लिये स्त्री को भी अधिकार है जैसा जैमिनी का सूत्र है "फलोत्साह विशेषात्" अर्थात् फल की चाहना से स्त्री भी यज्ञ करे ॥

और यह जो कथन है कि निर्धन होने से स्त्री यज्ञ नहीं कर सकती है सो यह भी ठीक नहीं क्योंकि उसका भी शास्त्रीय और लौकिक धन कहा है ॥

तथा च मनुः—अध्याय।९।१९४॥

अध्यग्न्यध्यावाहनिकं दत्तंचप्रीतिकर्मणि ।
भ्रातृमातृपितृप्राप्तंषड्विधंस्त्रीधनंस्मृतम्१९४॥

भावार्थः—विवाह काल में अग्नि के सन्निध पित्रादि करके जो दिया हुआ धन और प्रीतिकर्म में पति करके दिया हुआ तथा समयान्तर में पिता भ्राता माता इन से पाया हुआ इस तरह पर छ प्रकार का मुनियों ने स्त्री-धन कहा है ॥ १९४ ॥

यह तो शास्त्रीय स्त्रीधन हुआ और कातने आदि से जो स्त्री धन संग्रह करती है वह लौकिक धन कहाता है और पति करके जो कमाया हुआ धन है वह भी दोनों का ही है क्योंकि पत्नी पाणिग्रहण के समय पति से कहती है "धर्मेचार्थे च कामे च नातिचरितव्या" अर्थात् धर्म अर्थ के काम में विना मेरी सम्मति के काम न करना और स्मृति भी यह कहती है कि कर्मफलों और धन संचय करने में मेरे कहे का उल्लङ्घन न करना इत्यादि ॥

और पूर्व श्लोक में जो यह लिखा है कि जिस के वह उस का ही धन है, फल की इच्छा से श्रुति स्मृति से बल-वती होने के कारण अप्रमाणिक है और इस श्लोक का यह आशय भी नहीं है कि स्त्रीधन ही नहीं होता है क्योंकि इस में मनु जी का प्रमाण पीछे लिख चुके हैं किन्तु उस श्लोक का यह अभिप्राय है कि वह (स्त्रीआदि) उस के

खर्च करने में स्वतन्त्र नहीं अर्थात् पति की सम्मति बिना खर्च नहीं कर सकती है और मनुजी के इस श्लोक से भी इस ही की पुष्टी होती है ॥

तथा च मनु० अध्याय ३ श्लोक ५२ ॥

स्त्रीधनानितुयेमोहा—दुपजीवन्तिबांधवाः ।
नारीयानानिवस्त्रंवातेपापायान्त्यधोगतिम् ॥

भावार्थः—स्त्री धन जो है यदि मोहवश होकर उसे भ्राता आदि खर्च करले या स्त्री की सवारी वस्त्रों को अपने खर्च में लावे तो वह पापी नरक को जाते हैं । इसलिये स्त्री को निर्धन कहना उचित नहीं है और पूर्वोक्त श्लोक निर्धन वाचक भी नहीं है किन्तु अस्वतन्त्रता से अभिप्राय है । इसलिये स्त्री भी फल की इच्छा से धनवती होने के कारण यज्ञ करने की अधिकारणी है ॥

बहुधा पण्डित जो यह कहते हैं कि स्त्री शूद्रके संस्कार अमन्त्रक होने के कारण दोनों को वेद के मंत्र उच्चारण करना अथवा सुनने का अधिकार नहीं, तब पढ़ना कैसा यह कहना उचित नहीं क्योंकि शूद्रको तो इससे पहिले ही कात्यायनसूत्र में ऐसा लिखा है कि—

"शूद्रस्य वेदाक्षर श्रवणे उच्चारणे धारणे च प्रायश्चित्तस्य दर्शनात् श्रवणे च त्रपुज-

तुभ्यां श्रोत्रपूरणम् । उच्चारणे जिह्वाच्छेदः धारणे च शरीरभेद इति,, ॥

भावार्थः-क्योंकि प्रायश्चित्त के देखने से ऐसा विदित होता है कि जो शूद्र वेद को सुने तो उस के कानों में शीसा भरवाया जावे और उच्चारण करे तो जिव्हा छिद्वा दे और धारण करे तो शरीर, भेदन करवादे परन्तु स्त्री को ऐसा नहीं लिखा किन्तु उसे तो वेदमन्त्र सूत्र में ही पढ़ने लिखे हैं तब दोनों कर्मकाण्ड और पठनपाठन में समान कैसे हो सकते हैं ॥

जैमिनीयन्यायमालाविस्तरः-मीमांसा-ग्रन्थः षष्ठोऽध्यायः । तृतीयाधिकरणमारचयति-स्त्रियानसोऽस्त्यस्तिवानो पुंलिङ्गेन-तदीरणात् । प्रकृत्यर्थतयालिङ्ग संख्यावन्नाविवक्षितम् ॥ ५ ॥ अस्त्युद्दश्यरातत्वेन संख्ययासदृशत्वतः । यद्विभक्तिविकारादे र-र्थस्तत्प्रकृतेर्ननु ॥ ६ ॥ स्वर्गकामो यजेतेति पुंल्लिङ्गशब्देनाधिकारिणोऽभिधानात् सोऽधिकारः स्त्रिया नास्ति । नच ग्रहैकत्वव-

लिङ्गमविवक्षितमिति वाच्यम् । एकत्ववल्लिङ्गस्य प्रत्ययार्थत्वाभावात् । प्रकृत्यर्थतया तु गृहैवकत्ववद्विवक्षितं पुंलिङ्गमिति प्राप्ते ब्रूमः । इति पूर्वपक्षः ॥

जैमिनीयन्यायमालाविस्तरनामक मीमांसा ग्रन्थ के छटे अध्याय के तृतीयाधिकरण में लिखा है कि स्त्री को यज्ञ करने का अधिकार है वा नहीं ? उत्तर—पुंलिङ्गवाची स्वर्गकामपुरुष को यज्ञकरना कहा होने से स्त्री को यज्ञ का अधिकार नहीं यह पूर्व पक्ष हुआ । और यह न कहना चाहिये कि घर के एक होने के तुल्य लिङ्ग विवक्षित नहीं है । क्यों कि एक होने के तुल्य लिङ्ग प्रत्ययार्थ नहीं है किन्तु प्रकृत्यर्थ होने से घर के एक होने के तुल्य पुंलिङ्ग विवक्षित है ऐसा पूर्वपक्ष प्राप्त होने पर कहते हैं ॥

अस्ति स्त्रियाः कर्माधिकारः कुतः पुल्लिङ्गस्याविवक्षितत्वात् । नह्येकत्वस्य प्रत्ययार्थत्वमविवक्षाया निमित्तम् । किन्तूद्देश्यगतत्वम् । इहापि यः स्वर्गकामः स यजेतेति वचनव्यक्तौ पुल्लिङ्गस्योद्देश्यगतत्वेनैकत्वसंख्यया सदृशत्वान्नास्ति विवक्षितत्वम् । नच

प्रकृत्यर्थो लिङ्गम्। किन्तु स्त्रीलिङ्गतावट्टा-वादिभिः स्त्रीप्रत्ययैरभिधीयते। पुंलिङ्गं तु वृक्षानित्यस्मिन् द्वितीयाबहुवचने विभक्ति-विकारेण नकारादेशलक्षणेन व्यज्यते। एवं फलमित्यस्मिन् प्रथमैकवचने नपुंसकाभि-व्यक्तिः। तस्मात् लिङ्गस्य प्रकृत्यर्थत्वाभा-वादुद्देश्यगतत्वेनाविवक्षितत्वाच्च स्त्रिया-अस्त्यधिकारः॥ इति सिद्धान्तपक्षः॥

स्त्रीको यज्ञादि कर्मका अधिकार है क्योंकि वहां स्वर्गकाम पदमें पुंलिङ्ग विवक्षित नहीं है। प्रत्ययार्थत्व एकत्वको अविवक्षाका निमित्त नहीं है। किन्तु उद्देश्यगत है। यहां भी जो स्वर्गकी कामना वाला है वह यज्ञ करे ऐसा आशय स्पष्ट होने पर पुंलिङ्गके उद्देश्य वाक्यगत होने से एकत्व संख्याके तुल्य विवक्षित नहीं है और लिङ्ग प्रकृति का अर्थ नहीं है किन्तु स्त्रीलिङ्गता के तुल्य टाप् आदि प्रत्ययों से लिङ्ग कहा जाता है। और वृक्षान् इस द्वितीया के बहुवचनान्त पद में विभक्तिके स्थानमें हुए नकारादेश चिह्न से पुंलिङ्ग प्रकट होता है। इसी प्रकार फलं इस प्रथमा विभक्ति के एकवचन में नपुंसकलिङ्ग प्रकट है

तिससे सिद्ध हुआ कि लिङ्गके प्रकृत्यर्थ न होने और उद्देश्यके साथ में अविवक्षित होनेसे स्त्री को यज्ञाधिकार है यह सिद्धान्तपक्ष हुआ—

चतुर्थाधिकरणमारचयति—

दम्पतिभ्यांपृथक्कार्य्यं सह वाऽऽख्यातसंख्यया।
पृथङ्मैवमवैगुण्यात् कर्त्रैक्यं देवतैक्यवत्॥७॥

यजेतेत्याख्यातप्रत्ययगता या: संख्या या उद्देश्यगतत्वाभावेन विवक्षाया वारयितुमशक्यत्वादेककर्तृकत्वाय दम्पतिभ्यां पृथगेव कर्मानुष्ठेयमिति चेत्। मैवम् वैगुण्यप्रसङ्गात्। कर्मणि तत्र तत्र पत्न्यवेक्षणं यजमानावेक्षणं चेत्युभयमाम्नातम्। तत्र यजमानप्रयोगे पत्न्यवेक्षणं लुप्येत। पत्नीप्रयोगे च यजमानावेक्षणं लुप्येतेति सहेतोर्वैगुण्याय द्वयो: सहाधिकार:। न च यजेतेत्येकत्वं विरुद्धम्। अग्नीषोमौ देवतेत्यत्र यथा व्यासक्तयोर्दैवतैक्यम्। तथा दम्पत्योरेक-

मेव कर्त्तृत्वमित्यङ्गीकारात्। तस्माद्दम्पत्योः सहाधिकारः॥

भाषार्थः—अब चौथा अधिकरण रचते हैं। यजेत—इस तिङन्त क्रियामें प्रतीत होनेवाली संख्या उद्देश्यकर्त्ता से सम्बन्ध रखनेवाली न होनेसे विवक्षा का निवारण नहीं हो सकती इस से एक कर्त्ता होने के लिये स्त्री तथा पतिको पृथक् २ यज्ञ करना चाहिये यह पूर्वपक्ष हुआ—उत्तर—यह ठीक नहीं क्योंकि ऐसा होने में तब २ कर्ममें पत्नी देखे यजमान देखे इस दोनोंका देखना लिखा है। वहां यदि यजमान ही अकेला यज्ञ करे तो पत्नी का देखना न रहेगा। और पत्नी यज्ञ करे तो यजमान का देखना नहीं हो सकता इस प्रकार हेतु सहित का वेगुण्य होने के लिये दोनों को साथही अधिकार है। और (यजेत) क्रिया का एकवचन विरुद्ध नहीं है अग्नी-षोम देवता है यहां मिले हुए दो देवता एक ही कहाते हैं वैसे स्त्रीपुरुष मिलकर भी एकही कर्त्ता हुआ। इससे सिद्ध हुआ कि स्त्रीपुरुष को यज्ञका साथ ही अधिकार है।

और मनु जी ने भी धर्म्मकार्य्य में स्त्रीको सहधर्म्मिणी ही कहा है।

तथा च मनुः—

प्रजनार्थं स्त्रियः सृष्टाः संतानार्थं च मानवाः।
तस्मात्साधारणो धर्म्मः श्रुतौ पत्न्या सहोदितः॥९६

भावार्थः—गर्भधारण करने के अर्थ स्त्रियों को उत्पन्न किया और संतान के अर्थ पुरुष उत्पन्न किये इस से समान धर्म्म स्त्रीपुरुष का वेद में कहा है ॥ ९६ ॥ इसलिये गृहस्थ आश्रम में पतिसेवाविरोधीकार्य्य छोड़ कर स्त्रीको भी पुरुष के समान सब धर्म्म करने का अधिकार है और विद्वानोंका यह कथन भी ठीक है कि स्त्री विना पुरुषके अग्निहोत्रादि नहीं कर सक्ती है परंतु पुरुष भी तो ऐसे ही विना स्त्री के अग्निहोत्रादि श्रोतस्मार्तकर्म्म नहीं कर सक्ता है तब पुरुषही में क्या विशेषता हुई। देखो स्त्री के देहान्त होने पश्चात् पुरुष का भी अग्निहोत्र बन्द हो जाता है और आजकल की तो वार्ता का कुछ कहना ही नहीं देखो लक्षहां पुरुष गयाजी जाते हैं॥ परंतु स्त्री के साथ न ले जाने से वैगुण्यता के कारण श्राद्धका फल उन को यथोचित नहीं होता है॥

और यह जैमिनी के सूत्रों से भी जिनकी मीमांसा माधवाचार्य्य जी ने करी है स्पष्ट है कि स्त्री या पुरुष पृथक् यज्ञ नहीं कर सकते हैं क्योंकि जहां "पत्न्यवेक्षणं" आता है वहां विना स्त्री कैसे हो सकता है और जहां "यजमानावेक्षणं" आता है वहां पुरुष के विना कैसे कार्य्य हो सकता है और यदि ऐसा नहीं कराजावे तो वैगुण्यता के कारण फलप्राप्ति नहीं होगी तब यज्ञ करना ही वृथा हो जायगा इसलिये जैमिनी ने स्त्रीपुरुष को साथ में अधिकार दिया है ॥

(पांचवां अध्याय, सदाचार में)

१-कौसल्यापितदादेवी रात्रिंस्थित्वासमाहिता। प्रभातेचाकरोत्पूजां विष्णोःपुत्रहितैषिणी ॥ साक्षौमवसनाहृष्टा नित्यंव्रतपरायणा। अग्निंजुहोतिस्मतदा मन्त्रवत्कृतमङ्गला ॥ "मयार्चितादेवगणाःशिवादयो महर्षयोभूतगणाःसुरोरगाः"

भावार्थः-राजा दशरथ की पत्नी कौसल्यादेवी रात को सावधान होकर प्रातःकाल पुत्रके हितके कारण विष्णु की पूजा करती भई, फिर कैसी कौसल्या है कि क्षौम वस्त्र धारण करने वाली प्रसन्नचित्ता, सदा व्रतधारण करने वाली मन्त्रसहित होम करती भई और मंगलाचरण पढ़ती भई ॥ (१०२ सर्ग ४३ अध्याय) यह वृत्तान्त उस समयका है जब श्री रामचन्द्रजी को राजगद्दी होने वाली थी ॥

२-जब हनुमान जी श्रीसीताजीकी खबर को गये तब अशोकवाटिका में पहुंचकर सोचने लगे कि अब सीताजीके पास कैसे जाना हो वहां पर बैठकर यह विचार किया (रामायण ३५२ सर्ग ४९)

"संध्याकालमनाःश्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी। नदींचेमांशुभजलां संध्यार्थंवरवर्णिनी"

भावार्थः- अब संध्या का समय हुआ जानकी जी इस स्वच्छ जलवाली नदी में अवश्य संध्या करने को आवेंगी,

३-कादम्बर्याख्यायिकायामपि महाश्वेतावर्णने-" अथ आगामिन्यां क्षपायां भगवतीसंध्यामुपास्य शिलातलोपविष्टायां पवित्राघमर्षणानि जपन्त्यां महाश्वेतायाम्;"

भावार्थः-यह कादम्बरी महाश्वेता के वर्णन में लिखा है कि "महाश्वेता रात्रि के आगत होने पर भगवती संध्या की उपासना करके और शिला पर बैठकर पवित्र जो अघमर्षण सूक्त है उसे जाप कर रही थी" ॥

४-गार्गी-यह सब शास्त्र में बड़ी निपुण रही और इस ने योगी याज्ञवल्क्य के साथ शास्त्रार्थ किया जो उस समय उनके समान विद्या में दूसरा कोई न था और उन्हों ने उसकी विद्या और बुद्धि की बड़ी प्रशंसा की, यह विरक्त की नाईं रहती थी, एक समय यह पण्डितों की सभा में नग्न चली गई इस पर बहुत से लोग उठे कि तू पुरुषों के आगे नग्न क्यों चली आई है यह तैंने बड़ा अनुचित करा, इसने उत्तर दिया कि मुझे कोई पुरुष ही दिखाई नहीं

देता है क्योंकि स्त्री वह कहलाती है जो स्वतन्त्र न हो ऐसे हो तुमभी लोभके मारे राजा के आधीन हो। यह सुनकर सब निरुत्तर हो गये ॥

५—सुलभा—यह क्षत्री की लड़की थी इसने विवाह नहीं कराया था यह जन्मपर्यन्त कुमारी रही संन्यासवस्त्र पहनती थी और दण्ड भी धारण करती थी इस ने सुना कि राजा जनकको गृहस्थामें रह कर ज्ञानी होने की बहुत प्रशंसा है एक दिन यह उनकी परीक्षा लेनेको राजा जनककी सभामें गई और योगबल से राजाके शरीर में घुस गई तब राजाने कहा तू कौन हुई है जो तू मुझ राजाके देह में घुस गई और मैं पुरुष तू स्त्री। मैं ग्रह बड़ा अनुचित काम तू ने किया है और बहुत सा अभिमान भी नहीं करों तब निकल गई और राजासे कहा मैं तुम्हारा बड़ा ज्ञानी सुनती थी परन्तु यह सब मिथ्या है क्योंकि तुमको अभीतक स्त्रीपुरुषके आत्मा में भेद और राजा होने का अभिमान है यह सुनकर राजा बहुत लज्जित हुआ और हारमानी (यह वार्त्ता महाभारत शान्तिपर्व में है)

६ चुडेला—यह भी क्षत्री की लड़की थी इसने अपने उपदेश से पतिको ज्ञान सिखाकर विरक्त बना दिया, फिर एक दिन यह उसकी परीक्षाको गई राजाने उसे नहीं पहिचाना, इसने राजासे कहा कि अभी तुमको ज्ञान

नहीं हुआ राजाने यह जानकर कि यह मेरे झोंपड़ी बांध के रहनेके कारण ऐसा कहती है उसने झोंपड़ी में अग्नि लगादी तबभी उसने यही कहा, राजा ने यह जानकर कि इसे यह ध्यान है कि राजाको शरीर प्यारा है पर्वत परसे गिरने को उद्यत हुये तब रानीने उसको रोका और कहा। यही तो अज्ञान है कि अभी तुझमें मेरा है ऐसा अभिमान बनाहुआ है राजा यह सुनकर लज्जित हो गया॥

७—मंदालसा—यह भी क्षत्री की लड़की रही इसने विवाह करते समय अपने पतिसे यह प्रतिज्ञा की कि जो तुम पुत्रों को घर में रक्खोगे तो मैं नहीं रहूंगी पति ने यह स्वीकार कर लिया, जब इसने अपने कई लड़कों को ज्ञानका उपदेश करके विरक्त बना दिया तब राजाने कहा अब मैं इन दो पुत्रोंको रक्खूंगा तो रानी चलदी और चलते समय कुछ उपदेश लिखकर लड़कों को देदिया और कहा जब तुमको कष्ट हो इस को खोलकर पढ़लेना। एक दिन वह अपने पिताके देहान्त होने पर किसी राजा से हार कर उनका चित्त बड़ा दुःखित हुआ तब उन्हों ने अपनी माता का दिया हुआ उपदेश खोलकर जो पढ़ा तो उन को भी ज्ञान हो गया और फिर घर लौट कर नहीं आये ॥

८—सावित्री का धर्म विषय में यम के साथ शास्त्रार्थ हुआ और यम इतना प्रसन्न हुआ कि उस ने कहा वर

मांगो तब सौभाग्यवती रहूं ऐसा सावित्री ने वर मांगा यम ने कहा तथास्तु अर्थात् ऐसा ही होगा। (महाभारत वनपर्व)

९-कपिलदेव-जी ने अपनी माता देवहूती को सांख्य-योग पढ़ाया था (भागवत० ३ स्कन्द)

१०-पाण्डवों-की मृत्यु के पश्चात् व्यास जी ने अपनी माता से कहा कि तुम अम्बिका और कौशल्या को लेकर वन में चली जाओ और वहां रहकर योगाभ्यास करो जिस से तुम्हारा कल्याण हो इत्यादि ॥ (महाभारत आदिपर्व २८ अध्याय)

११-मैत्रेयी-योगी याज्ञवल्क्यकी पत्नी थी जब वह विरक्त हुये तो उन्होंने सब धन अपनी दोनों स्त्रियोंको देना चाहा परन्तु मैत्रेयीने नहीं लिया और कहा जिस वस्तु की प्राप्ति के वास्ते आप ने यह धन छोड़ा है मैं भी वही लूंगी तब उन्हों ने उस को ज्ञानउपदेश करा ;

१२-विद्यावती-जो कवि कालीदास की पत्नी हुई उस की यह प्रतिज्ञा तो सब जानते ही हैं कि उस ने यह प्रण करा था कि जो पण्डित मेरे प्रश्नों का उत्तर देगा उस के साथ में विवाह करूंगी यह सुनकर बड़े २ पण्डित आये परन्तु उसके प्रश्नों का कोई भी उत्तर नहीं दे सका तब उन्हों ने विचारा कि इसका ऐसे मूर्ख के साथ विवाह कराओ जो यह जन्म पर्यन्त दुखी रहे तब कालीदास जो जिस

डाली पर बैठा था उसी को काटता था उसको देखकर कहा कि इस से अधिक मूर्ख कौन हो सकता है इसे ला-कर छल से उस का विवाह करा दिया विवाह पश्चात् जब विद्यावती को यह विदित हुआ कि यह तो महामूर्ख है तब उसे विद्या पढ़ाई और तत्पश्चात् वह ऐसा कवि हुआ कि आज तक उसके समान दूसरा कवि नहीं हुआ ॥

१३- जब श्री शंकराचार्यजी मण्डन मिश्र से जो उस समय का पूर्ण विद्वान् कर्मकाण्ड का गिना जाता था शा-स्त्रार्थ करने गये तो कुएँ पर जो स्त्रियां पानी भरतीं थीं उन से मण्डन मिश्रका मकान पूछा तब उन्हों ने यह उ-त्तर दिया, ॥

स्वतःप्रमाणंपरतःप्रमाणंकीराङ्गनायत्र-गिरंगिरन्ति । द्वारस्थनीडान्तरसन्निरुद्धाजा-नीहितन्मण्डनपण्डितौकः ॥

भावार्थः-जिस मकान के द्वार पर पक्षी इस बात की चर्चा करते हों कि वेद स्वतः प्रमाण हैं या परतः प्रमाण हैं उस को मण्डन मिश्रका मकान पहिचानना ॥

राजा भोज कैसा प्रतापी और धर्मात्मा राजा था कि जिस की कीर्ति और यश आज तक चला आता है और जिस के समय में संस्कृत विद्याकी इतनी उन्नती हुई कि वैसी न तो वर्त्तमान समय में है और न भविष्यत् में होने

की आशा की जाती है इस के राज्य में कोई भी ऐसा न था जो मूर्ख हो चाहे स्त्री हो चाहे पुरुष हो उस के समय की स्त्रियां भी कविता में ऐसी निपुण थीं कि ऐसे पुरुष भी आजकल नहीं होते हैं ॥

राजा भोज की सभा में एक प्रज्ञाचक्षु कवि सकुटुम्ब आया उसकी पत्नी ने भोज की प्रशंसा में यह पढ़ा ॥

रथस्यैकं चक्रं भुजगनमिताः सप्ततुरगा,
निरालंबो मार्गश्चरणविकलः सारथिरपि ॥
रविर्यात्येवान्तं प्रतिदिनमपारस्य नभसः, क्रि-
यासिद्धिःसत्त्वेभवतिमहतांनोपकरणे ॥१६९॥

भावार्थः—सूर्य के रथ का पहिया तो एक और सात घोड़े वे भी सर्पों से बंधे हुए, और आकाश में मार्ग और पागला सारथि ऐसा भी सूर्य दिन २ प्रति अपार आकाश का अन्त कर जाता है इसी वास्ते बड़ों की क्रियासिद्धि शरीर में या बल में होती है सामग्री में नहीं होती फिर पण्डित की पुत्रवधू कहने लगी कि हे ! देव सुनो ॥

धनुः पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी चंचलदृ-
शाम्, दृशां कोणो बाणः सुहृदपि जडात्मा
हिमकरः । स्वयं चैकोऽनङ्गः सकलभुवनं

व्याकुलयति, क्रियासिद्धिः सत्त्वे भवति महतां नोपकरणे ॥१७०॥

भावार्थ-जिस के पुष्प तो धनुष हैं और भौंरा रूप प्रत्यञ्चा है और चञ्चल नेत्रवाली स्त्रियों का नेत्र कोण तिस का बाण है और मनुात्मा चन्द्रमा तिसका मित्र और आप अङ्ग रहित है ऐसा अकेला ही कामदेव सम्पूर्ण भुवन को व्याकुल कर देता है इस वास्ते बड़ों की क्रियासिद्धि प्रताप में ही है सामग्री में नहीं है ॥

एक दिन राजा भोज कालीदास को देखकर अपने मन में कुछ खेद करता भया तिस के अभिप्राय को सीता ने जान कर कहा हे देव सुनो—

दोषमपि गुणवति जने दृष्ट्वा गुणरागिणो न खिद्यन्ते॥ प्रीत्यैव शशिनिपतितं पश्यन्ति लोकः कलंकमपि ॥

भावार्थ-गुणवान् मनुष्यों में दोष को भी देख के गुण के स्नेही जन खेद नहीं पाते हैं । जैसे चन्द्रमा विषे परे हुये कलङ्क को सब लोक (संसार) प्रीति करके ही देखता है ॥१७२॥ राजा प्रसन्न होकर उस को लक्ष रुपैये देता भया,

एक दिन कोई पतिव्रता स्त्री अपने सोते हुए पति के सिर को अपने गोद में धरे हुए थी, उस का पुत्र खेलता २

अग्नि में जापड़ा तब वह इस कारण कि यदि मैं उठी तो पति जाग पड़ेगा अग्नि से प्रार्थना करने लगी,

यज्ञेश्वर त्वं सर्वकर्मसाक्षी सर्वधर्मान् जानासि मां पतिधर्मपराधीनां शिशुमगृह्णन्तीं च जानासि ततो मदीयशिशुमनुगृह्य त्वं मा दहेति-

भावार्थ-हे यज्ञेश्वर ! तू सम्पूर्ण कर्मों का साक्षी है सम्पूर्ण धर्मों को जानता है, मैं पतिधर्म में पराधीन बालक को नहीं ग्रहण करती हुई को तुम जानो हो, इस वास्ते मेरे बालक पर अनुग्रह करके दग्ध मत करो ॥

पतिधर्म के प्रताप से लड़का वहां आध घड़ी तक रहा परन्तु उस को अग्नि ने दग्ध न करा ॥

जब सत्यभामा आदि कृष्णकी पत्नी द्रौपदी से मिलने गईं तो कहने लगीं कि तुम्हारे पांच पति होनेपर भी तुम सब को वश में रखती हो और हमारे पतिके तो बहुतसी पत्नी है तब भी वह हमारे वश में नहीं रहता ऐसा तुम्हारे पास क्या जादू है जिस के कारण युधिष्ठिर आदि भी तुम्हारा बड़ा मान करते हैं ॥

यह सुनकर द्रौपदी कहने लगी कि सुनो प्यारी जादू टोना कराना मूर्खा स्त्रियों का काम है जा धर्म्म को जानतीं हैं वह कदापि ऐसा खोटा काम नहों करतीं, जिस कारण मेरे पति मेरा कहा मानते हैं सो सुनो मेरे पति ने मुझे आज तक कभी सोता नहीं देखा सदैव उन से पीछे सोती हूं और पहिले उठती हूं ॥ जितनी राज्य की आमदनी और खर्च है नित्य रात्री को बता देती हूं जितने अतिथि आते हैं सब की यथायोग्य सत्कार पूजा नित्य होती है जिस की जैसी रुची देखती हूं वैसाही भोजन उसके वास्ते बनवाती हूं आज तक कोई अतिथि निराश होकर नहीं गया सदा पतिका चित्त प्रसन्न रखती हूं जितने पतिव्रता स्त्रियों के धर्म्म होते हैं सब ही करती हूं मेरे कई सहस्त्र दास दासी हैं परन्तु युधिष्ठिरादि की सेवा मैं स्वयं ही करती हूं यही कारण है कि जिस से वह मेरे कहे पर ध्यान देते हैं और जो पतिव्रता स्त्री है वह कभी कोई बात पति के प्रतिकूल नहीं करती और ऐसी स्त्री की स्वर्ग में भी पूजा और आदर होता है । (महा भारत) सदैव उन का ही मान और पूजा हुआ करती है जो अपने धर्म्म में तत्पर और कटि बद्ध रहते हैं चाहे स्त्री हो या पुरुष हो और ऐसे की ही पूजा से पुण्य भी होता है जिस से सुख मिलता है अपूज्य के पूजने में तो उलटा पाप ही होता है । देखो मनुजी

ने स्त्रियों की पूजा का कितना फल लिखा है जब मनुजी ने इनमें कुछ विशेषता देखी तब ही तो ऐसा कहा। तथा च मनु अध्याय ३ ॥

यत्रनार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवताः
यत्रेतास्तनपूज्यंतेसर्वास्तत्राफलाःक्रियाः ५६

अर्थः—जिस कुल में स्त्रिया पूजी जाती हैं अर्थात् उन का मान सत्कार होता है वहां देवता रहते हैं और जहा इन का पूजन नहीं होता वहा संपूर्ण काम यज्ञादिक करने निरर्थक होते हैं ॥ अन्यच्च—

संतुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्राभार्या तथैवच ।
यस्मिन्नेवकुलेनित्यंकल्याणंतत्रवैध्रुवम् ६०

अर्थः—जिस कुल में सदैव स्त्री करके पति और पति करके स्त्री प्रसन्न रहती है तिस कुलमें कल्याण निश्चय रहता है॥ ऐसी परस्पर प्रीति तबही हो सकती है जब दोनः विद्वान् विदुषी हों और गुण स्वभाव भी मिलें मूर्ख और विद्वान् में तो परस्पर प्रीति होना ही असम्भव है इस कारण स्त्री का भी पढ़ा हुआ होना अवश्य चाहिये क्योंकि स्वभाव और गुण बहुधा कम मिलते हैं यदि स्त्री पढ़ीहुई है और पातिव्रतधर्म्म को यथोचित जानती है तब वह अपनी विद्या के बलसे पतिके स्वभाव के अनुकूल अपना स्वभाव बनालेगी और मूर्खा से यह कदापि नहीं हो सकता है ॥

ग़ज़ल

यह भारत की जो दुर्दशा होरही है। जहां तक हो अफ़सोस इसपर सही है॥ जो खूबी थी इस देश से उठ गई है। अविद्या की अंधियारी छाई हुई है॥ बुराई हि हर दिलको भाई हुई है। खुदी हर बशर में समाई हुई है॥ अविद्या से भरपूर सब औरतें हैं। कसम गोया पढ़ने की खाई हुई है॥ नहीं दोष इसमें है इन का ज़रा भी। यह पोपोंकी बातें चलाई हुई हैं॥ जो थोड़ा बहुत एक दोनों पढ़ा भी। तो कामों में अपने छिपाई हुई है॥ नहीं औरतों में है वह पारसाई। जो भारत की खूबी कहाई हुई है॥ जो वे अक़्ल से कुछ किया काम उन्हों ने। तो विद्या भी उन से लजाई हुई है॥ नहीं लेते हैं अक़्ल से काम इन्सान। भलाई के बदले बुराई हुई है॥ हैं तिसपर बहुत मुशकिलें सख्त दरपेश। मुसीबत में हर जान आई हुई है॥ जो लालोम निस्वां का करते हैं चरचा। तो बूढों की बदनामी छाई हुई है॥ जो तरमीम करते हैं रस्मों में जारी। तो पोपों में फरयाद छाई हुई है॥ यकीं है कि अन्धेर यह सब मिटेगा। कि विद्या की उजियाली आई हुई है॥

श्रोत्रिय शंकरलाल बिजनौर निवासिकृत पुस्तकें ॥

१=गंगामाहात्म्य ॥

उन प्रमाणों का उत्तर जो गोकुलप्रसाद ने मुंसिफी देवबन्द में दिये थे श्रुतिस्मृति अनुकूल दिया है । मूल्य =)

२=वर्णव्यवस्था ॥

इसमें यह सिद्ध करा है कि शास्त्र अनुकूल वर्णव्यवस्था मानने में योनी ही कारण नहीं है किन्तु स्वाभाविकगुण और वीर्य प्रधान है । मू० =)

३=स्त्रीअधिकार मीमांसा ॥

इस में स्त्रियों के यज्ञोपवीत, नैष्ठिकब्रह्मचर्यवेदादि का पठन पाठन यज्ञादि का करना और ऋषियों की नाई वेद-मंत्रों की ऋषिनी होना लिखा है। देखने योग्य है। मूल्य =)

४=विधवा पुनःसंस्कार

इस में धर्मशास्त्र के ग्रन्थों से सिद्ध करा है कि जिन कन्याओं का पतिसंग नहीं हुआ उन का पुनःसंस्कार कर देना धर्म्मानुकूल है और क्षतयोनी स्त्रियों का भी नियोग अथवा फिर विवाह कर देना आपका लीन धर्म्म है । मू० =)

५=आशंका से हानी ॥

यह छोटा सा हास्य का पुस्तक है जिस में यह लिखा है कि एक लाला ने जो सनातनी थे अपने नाई के कहने से अपनी स्त्री का रांड होना तो स्वीकार कर लिया परन्तु आर्य कहलाने के डर से शंका नहीं करी । मू० =)

६=केवलगंगास्नानसेमोक्षनिर्णय ॥

इस में पं० शिवकुमार जी, और रामलाल जी, भीमसेन इत्यादि ९ पण्डितों की सम्मति और कुल अदालती कारर-वाई है जिस से सब हाल मुकद्दमें का मालूम होता है। देखने योग्य है। मूल्य ॥)

७=विवाहकाल निर्णय ॥

किस अवस्था में वरकन्या का विवाह होना योग्य और शास्त्रसम्मत है। मू० -)

८=शिवपूजा ॥

स्त्री, अनुपनीत और शूद्र के पूजे हुये शिव या शिवलिङ्ग को पूजने वाला रौरव नर्क को जाता है। मू०)।

९=इतिहासपुराण स्मृतिनहीं ॥

पं० शिवकुमार जी ने जो पुराणों को मनमाना स्मृति सिद्ध करा है उस का खण्डन। मू०)॥

१० = कन्यागृह भोजन ॥

कन्या के घर भोजन करना उचित है या नहीं। मू०)॥

११ समावर्त्तनकालनिर्णय ॥

पं० श्रीधरजीके व्याख्यान का उत्तर जो उन्हों ने गाज़ियाबाद में दिया था। मू०)॥

१२ = वेश्यानाचनिषेध ॥

इस में नाच देखने से जो आगामी आपत्ति हैं उनका वर्णन है और वेश्याओं की ६४ कला का भी वर्णन है जिस से वह पुरुषों को मोह लेतीं हैं। मू० -)

पुस्तकें ग्रन्थकर्त्ता के पास से मिलेंगी ॥